बिहार विधान-सभा सचिवालय

अखबार का नाम सन्मार्ग
13/4/12

सन्मार्ग कोलकाता 13.04.2012

म्यांमार सैनिक 'लोकतंत्र' की मंशा अभी भी संदिग्ध



शशिधर खान

आखिरकार एक अप्रैल, 2012 को बहुप्रतीक्षित संसदीय उपचुनाव तो हुए, लेकिन इसमें भी मतदान शुरू होने से लेकर समाप्त होने तक धांधली की आशंका बनी रही। इसके लिए पहली बार यूरोपीय देशों के पर्यवेक्षकों को यँगो आने और मतदान सम्पन्न होने तक रहने की इजाजत दी गयी थी, क्योंकि उन्हें दिखाने के लिये निष्पक्ष मतदान कराना था, ताकि यूरोपीय देश आर्थिक प्रतिबंध हटाने में और उदारता दिखाएं। भारत ने भी म्यांमार की सीमा वाले रा'य असम और मणिपुर के चुनाव अधिकारियों को निगरानी के लिये भेजा था। म्यांमार स्थित भारतीय राजदूत पहले से ही तैनात थे। उसके बावजूद मतदान में गड़बड़ी की संभावना बरकरार रही। सू की ने भी पहले ही मतदान की निष्पक्षता को संदिग्ध बताते हुए कह दिया था कि इस उपचुनाव का परिणाम भी पहले से आम चुनाव जैसा आने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता। और जैसा उन्होंने कहा, अमूनन वैसा ही हुआ। इस बार 45 सीटों के लिए खुले दिमाग से कराए गए मतदान के दिन सू की समर्थक एनएलडी कार्यकर्त्ताओं ने अपने नेता की भारी जीत का एकतरफा जश्न मना लिया। जबकि आधिकारिक तौर पर न तो चुनाव परिणाम की घोषणा हुई, न ही सू की की जीत की पुष्टि। सरकार, चुनाव आयोग सबकी रहस्यमय चुप्पी के बीच आधिकारिक परिणाम घोषित हुए बिना ही सू की समर्थक खुशी में नाचते- झूमते रहे। बड़ी संख्या में कार्यकर्ता मतदाता सूची में अपना नाम न होने की वजह से वोट ही नहीं डाल पाए। कइयों ने मतपत्र की छपाई में बड़ी समझदारी से की गयी हेराफेरी की भी शिकायत की। एनएलडी के बैनर तले 17 राजनीतिक दलों के उम्मीदवारों के नाम मिटाने और उनके पक्ष में पड़े वोट रद्द करने के इरादे से मतपेटी के मतपत्र गिरानेवाले संकरे छेद में इस हिसाब से मोम चिपकाया गया था ताकि एनएलडी बैनर तले खड़े 17 पार्टियों के उम्मीदवारों के नाम मिट जाएं और उनके पक्ष में पड़े वोट रद्द किये जा सकें।

एनएलडी प्रवक्ता ने बताया कि उन्होंने संघीय चुनाव आयोग को शिकायत पत्र तो भेजा, लेकिन जानते थे कि इससे कुछ होना जाना नहीं है। ये वो 45 सीटें हैं, जो नवंबर, 2010 चुनाव में रिक्त रह गयी थीं। क्योंकि सैनिक वर्दी त्यागकर लुंगी पहनकर सिविलियन बने जनरल संचालित सत्तारूढ़ यूनियन सोलिडेरिटी एंड डेवलपेंट पार्टी को उतने सिविलियन उम्मीदवार नहीं मिले। संसद की 664 सीटों में दो-तिहाई सैनिकों के लिये आरक्षित होने के कारण पूर्ण बहुमत में तो सत्तारूढ़ सैनिक जुंटा को रहना ही था। उस समय सू की को चुनाव परिणाम घोषित होने के बाद जेल से रिहा किया गया। इस बार यह कहकर उपचुनाव कराए गए कि सू की चुनाव लड़ेंगी।

सैनिक सरकार को सू की के जीतकर आने और निचले सदन का सदस्य बनकर सरकार में भी भागीदारी में कोई दिलचस्पी नहीं है। इस बात का एकतरफा प्रचार सिर्फ दुनिया के अन्य देशों को झांसे में रखने के लिए किया गया है। अगर वो सरकार में शामिल भी होती हैं तो उनकी भूमिका सरकार की किसी नीति की विरोध करनेवाली नहीं हो सकती। सबसे रोचक तो ये रहा कि चीन की सरकारी समाचार एजेंसी शिन्हवा ने भी सर्वप्रथम सू की समर्थकों के जीत का जश्न मनाते देखा और उनके सरकार में शामिल होने की संभावना प्रचारित की।

सू की ने अपने गृह चुनावक्षेत्र काउम से पर्चा भरा, जहां से 1990 में भारी मतों से जीतने के बावजूद सू की और उनके सहयोगी दलों के पूर्ण बहुमत को इसी सरकार ने मान्यता नहीं दी। फिर नवंबर, 2010 के आम चुनाव में सू की और उनके समर्थकों को जेल में बंद रखकर मतदान कराए गए, इसलिए सू की ने चुनाव का बायकाट किया। एक अप्रैल, 2012 का उपचुनाव भी कायदे से देखा जाए तो उसी छलावा जनतांत्रिक सुधार प्रक्रिया की एक चालाकी भरी करतूत है। इसका सबसे महत्वपूर्ण मकसद यूरोपीय देशों की सहानुभूति हासिल करना है, ताकि वे जनतंत्र की दिशा में कुछ कदम उठाते देखकर आश्वस्त हो जाएं और कुछ आर्थिक प्रतिबंध हटाने की दिशा में सोचें। दूसरा महत्वपूर्ण मकसद है, विपक्षी आंदोलन का एक प्रकार से लोप, जो सू की के संसद सदस्य बनते ही हो जाने की संभावना है। अब वे पहले की तरह सैनिक सरकार की नीतियों का सड़क पर उतरकर खुलेआम विरोध नहीं कर पाएंगी और न ही संसद में सू की और उनके समर्थक दलों के सदस्य कोई प्रभावी भूमिका निभा पाएंगे। वास्तव में वे सिर्फ कहने के लिए विपक्षी होंगे, उनके पास सरकारी नीतियों के समर्थन के सिवाए दूसरा कोई विकल्प नहीं होगा। अगर विरोध भी करें तो बेअसर साबित होगा, क्योंकि पूरी संसद पर यूनियन सोलिडेरिटी एंड डेवलपमेंट पार्टी का कब्जा है, जो जीते नहीं, जितवाए गए हैं। यह उपचुनाव इसलिए कराया गया है, ताकि कमजोर विपक्ष भी न हो। सैनिक सरकार ने पहले से ही कह रहा है कि सू की को सरकार में भागीदारी हो सकती है। इसलिए उपचुनाव से पहले ऐसा संविधान बनाया गया ताकि संसद पर पूर्व सैनिक अधिकारियों का ही वर्चस्व हो। एक अप्रैल के मतदान के फिलीपीन डेली ने अप्रैल फूल की संज्ञा देते हुए अपनी टिप्पणी में कहा कि बड़ी समझदारी से मतदाताओं को मूर्ख बनाने का इंतजाम लगाने के बाद उपचुनाव का झांसा यह बताने के लिए दिया गया कि 1962 के सैनिक तख्तापलट लेता यू को हटाकर तानाशाही व्यवस्था कायम करनेवाले जनरल ने बिन युग की समाप्ति और नए युग जनतंत्र बहाली की शुरूआत है। वैसी संवैधानिक व्यवस्था में ऐसे चुनाव का कोई अर्थ नहीं रह जाता, जिसमें सैनिक जुंटा का देश पर पूर्ण नियंत्रण का प्रावधन है। सैनिक जुंटा के पास यह अधिकार सुरक्षित है कि जब चाहे ये सारे तथाकथित उदारवादी कदम वापस लेकर मार्शल लॉ लागू कर दे। मीडियाकर्मियों और मतदाताओं को मतदान के दिन बेरोकटोक घूमने की छूट दी गयी थी। इसमें मतदाताओं के पास विकल्प भी था। नवंबर, 2010 की तरह सिर्फ सत्तारूढ़ दल को वोट डालने की मजबूरी नहीं थी। प्रेस सेंसरशिप में ढील भी अस्थायी और दिखावे की मानी जा रही है, क्योंकि चुनाव की निष्पक्षता का प्रत्यक्षदर्शी बनने बड़ी संख्या में मीडियाकर्मी पहुंचे हुए थे। सैनिक जुंटा के पास यह ढील भी वापस लेने का अधिकार है।

-लेखक पत्रकार हैं